उहद की लड़ाई

अल्लामा सै० मुहम्मद रज़ी साहब क़िब्ला, कराची
अनुवादकः सैय्यद सुफ़यान अहमद नदवी

बद्र की जंग में क़ुरैश के बड़े-बड़े नाम वाले सरदार मारे गएथे और बहुत से क़ैद हुए थे इस ज़िल्लत और हार की वजह से उनके दिलों में बहुत ज़्यादा गुस्सा और जलन की आग भड़क गई थी आख़िर मुसलमानों से बदला लेने और उन पर हमला करने के लिए एक बहुत बड़ी फ़ौज तैयार हुई जिसमें हर तरह का जंगी सामान और तीन हज़ार हथियार से लैस सिपाही थे। ये फ़ौज अबुसुफ़यान की कमाण्डरी में मदीने की तरफ़ निकल पड़ी और चौथी शव्वाल 3 हिजरी बुध के दिन मदीने के क़रीब आकर रुक गई। इस फ़ौज के आने की ख़बर सुनकर नबी करीम[स०] ने भी मुसलमानों को मुक़ाबले की तैयारी का हुक्म दिया और जुमे की नमाज़ पढ़कर एक हज़ार आदमियों के साथ आप मदीने से निकले।

अब्दुल्लाह बिन उबई मशहूर मुनाफ़िक़ अपने तीन सौ साथियों के साथ इस फ़ौज में मौजूद था मगर बाद में अपने साथियों के साथ वापस हो गया था। इस तरह अब इस्लामी फ़ौज में सात सौ सिपाही बाक़ी रह गए थे। आंहज़रत मदीने से बाहर ''उहद'' पहाड़ के क़रीब तशरीफ़ लाए और उसे अपनी पीठ की तरफ़ करके अपनी फ़ौज की सफ़ें ठीक कीं।

उहद एक मशहूर पहाड़ का नाम है जो मदीने से उत्तर की तरफ़ डेढ़ दो मील की दूरी पर है। उहद की लड़ाई इसी पहाड़ के सामने हुई थी।

मदीने के बाहर जाकर फ़ौज को देखा गया और बद्र की जंग की तरह इस लड़ाई में भी जो लोग कम उम्र थे उनको वापस भेज दिया गया। मगर जेहाद का शौक़ ये था कि जब राफ़े बिन ख़दीज से कहा गया कि तुम उम्र में बहुत छोटे हो वापस चले जाओ तो वह अपने अंगूठे के बल तन कर खड़े हो गए ताकि उनका क़द ऊँचा नज़र आए आख़िर इस जेहाद के शौक़ को देखकर उनको फ़ौज में ले लिया गया। फ़ौज के पीछे की तरफ़ पहाड़ की एक घाटी थी और इसकी पूरी उम्मीद थी कि दुश्मन इस तरफ़ से आकर हमला करेगा इसलिए रसूल[स०] ने उस तरफ़ पचास तीर चलाने वालों की एक टुकड़ी को लगा दिया था और हुक्म दिया था कि वह किसी भी हालत में इस घाटी से न हटें। ग़रज़ लड़ाई शुरु हो गई। क़ुरैश की फ़ौज का झण्डा उठाने वाला तलहा बिन अबी तलहा सफ़ से बाहर निकला और पुकार कर कहने लगा। क्यों मुसलमानो! तुम में कोई है जो मुझको दोज़ख़ में जल्दी भेज दे या ख़ुद मेरे हाथों जन्नत में चला जाए।

शेरे ख़ुदा हज़रत अली[अ०] ने बढ़कर फ़रमाया वह मैं हूँ ये कहकर तलवार चलाई और तलहा की लाश ज़मीन पर थी। इसके बाद उसका भाई मैदान की तरफ़ झपटा, सरवरे काएनात[स०] के चचा हज़रत हमज़ा[अ०] ने तलवार के एक ही वार में उसे क़त्ल कर दिया अब घमासान की लड़ाई शुरु हो गई, हज़रत हमज़ा, हज़रत अली[अ०] और हज़रत अबुदुजाना अंसारी क़ुरैश की फ़ौज पर बेपनाह हमले कर रहे थे इसी सख़्त लड़ाई में क़ुरैश की फ़ौज के एक हब्शी ग़ुलाम ने जिसका नाम वह्शी था धोके से हज़रत हमज़ा पर हब्शियों के एक ख़ास हथियार के साथ हमला कर दिया जिस से आप शहीद हो गए। ग़रज़ हज़रत अली[अ०] और दूसरे इस्लामी बहादरों के

हमलों की ताब न लाकर क़ुरैश के पैर उखड़ गए और सब के सब भाग गए ये देखते ही मुसलमानों ने उनका छोड़ा हुआ माले ग़नीमत लूटना शुरु कर दिया। घाटी की हिफ़ाज़त करने वाले तीर अंदाज़ों ने जब ये हालत देखी तो सिवाए कुछ आदमियों के सब वहाँ से हट आए और ग़नीमत के माल की लूट में शरीक हो गए। हालांकि रसूल[स०] ने उन्हें वहाँ से हटने से मना किया था जिसका नतीजा ये हुआ कि क़ुरैश की भागी हुई फ़ौज उसी घाटी से पलट आई और मुसलमानों पर पीछे से अंजानी हालत में अचानक हमला कर दिया। क़ुरैश की इस फ़ौज की कमाण्डरी ख़ालिद बिन वलीद और इकरमा बिन अबी जहल कर रहे थे, इस हमले में मुस्अब बिन उमैर भी शहीद हो गए। जो उस वक़्त फ़ौज का अलम उठाए हुए थे उनकी शहादत पर ये ग़लत ख़बर फैल गई कि रसूल[स०] शहीद हो गए। ये ख़बर सुनते ही लोगों में सख़्त घबराहट पैदा हो गई और बड़े-बड़े दिलेरों के क़दम उखड़ गए लेकिन इस पर भी हज़रत अली[अ०] और कुछ दूसरे वफ़ादार जमे रहे। दुश्मन भीड़ के साथ रसूल[स०] पर हमला करता था मगर जुलफ़िक़ार की बिजली उसकी सफ़ों को टुकड़े-टुकड़े कर देती थी हज़रत अबूदुजाना सरवरे काएनात पर झुक कर ढाल बन गए थे और जो तीर आते थे वह उनकी पीठ में उतर जाते थे इस ज़बरदस्त ख़ून-ख़राबे के बाद जबकि दोनों फ़ौजें बेहाल हो चुकी थीं, अबूसुफ़यान अपनी फ़ौज के साथ मक्का की तरफ़ वापस चला गया।

इस लड़ाई में क़ुरैश का भी बहुत जानी और माली नुक़सान हुआ था लेकिन मुसलमानों को ज़्यादा नुक़सान पहुँचा और इसकी वजह सिर्फ़ ये हुई कि रसूल[स०] के हुक्म पर अमल नहीं किया गया और घाटी की हिफ़ाज़त का ख़याल नहीं रखा गया और शायद इस ख़याल से ये ग़लती हुई थी कि तीर चलाने वाली टुकड़ी के सिपाही ये समझ रहे थे कि क़ुरैश की अब पूरी तरह हार हो चुकी है और वह वापस नहीं पलटेंगे। मगर उनकी ये भयानक ग़लती थी जिसके नतीजे में मुसलमान फ़ौज अपने बेहतरीन बहादरों और बड़ी-बड़ी शख़सियतों से महरूम होकर रह गई।

लेकिन बहरहाल ये हार भी मुसलमानों की हिम्मत को तोड़ न सकी, उनके जोश और ज़्यादा बढ़ गए और ये वक़्ती हार उनकी हमेशा की जीत की बुनियाद बन गई वह हिम्मत न हारे और सब्र और जमने के साथ दीन की हिफ़ाज़त और हिमायत करते रहे आख़िर ख़ुदा ने उन्हें इज़्ज़त दी और कुछ ही दिनों में सारा अरब मुल्क इस्लामी झण्डे के नीचे आ गया और हक़ की बड़ाई के सामने काफ़िरों और शिर्क करने वालों का सारा घमण्ड मिट्टी में मिल गया।

□□□

शेष...... ख़ुमुस

क्योंकि ख़ुमुस एक धार्मिक कर्त्तव्य के रूप में है। राजनीतिक शक्ति एवं महत्व अन्य जाति के मनुश्यों के पास होने के बाद भी जाति को आत्मा यदि जागृति है तो उनका आथिक संगठन अपने धार्मिक एवं जातीय हितों एवं लाभों को पूर्ण करने के लिए भली प्रकार से अपने पैरों पर ख़ड़ा हो सकता है। जिसका जीता जागता उदाहरण हज़रत मुहम्मद तथा उनके सम्बन्धियों के समय की कथाओं से हो जाऐगा जिनसे ज्ञात होता है कि किस प्रकार समय की समस्त विमुखताओं के विपरीत शियों की जीव़न आवश्यकताओं की पूर्त्ति ये लोग किया करते थे तथा उस राजनीतिक का भेद भी स्पष्ट हो जाऐगा जो क़ुरआन में होते हुये भी ख़ुमुस की विरोधी रही।

आज भी इराक़ या ईरान का वर्णन नहीं जो हम से कोसों दूर है अपने क़रीब अफ़्रीक़ा ,बम्बई, कराची या लाहौर के उन स्थानों के सामूहिक संगठन पर यदि ध्यान दिया जाऐ जो ख़ुमुस निकालने के पाबन्द हैं तो ज्ञात होगा कि यदि जाति के समस्त लोग प्रत्येक शहर एवं ग्राम में इस कर्त्तवय के पालक बन जाऐं तो आज हमारी आर्थिक स्थित किस प्रकार अन्य जातियों के लिऐ प्रशसंनीय बनकर संगठित एवं सुग्यवस्थित हो सकती हैं। □□□